P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-5* ISSUE-4* December- 2017
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

मानवाधिकार : चिन्तन, चुनौतियाँ और समाधान

सारांश

मानव ईश्वर की सर्वोत्तम कृत्ति है। मानवता मानव जीवन का धर्म है। प्रत्येक मानव क साथ मानवता का बर्ताव होना चाहिए। चाहे वह किसी भी धर्म, जाति, लिंग, सम्प्रदाय तथा वर्ग का हो, सभी को सम्मानपूर्वक जीवन जीने का नैतिक अधिकार है। वस्तुत : यही मानवाधिकार है।

मानवाधिकार वास्तव में वे अधिकार है, जो मनुष्य होने के नाते प्रत्येक व्यक्ति को प्राप्त होते है। ये अधिकार सामाजिक जीवन की ऐसी दशायें है जो व्यक्तित्व के सम्पूर्ण विकास हेतु अपरिहार्य है। वस्तुतः मानवाधिकार रणनीति नहीं, व्यवस्था का विषय है। यह मानवतावाद की सर्वोत्तम अभिव्यक्ति व उत्कृष्ट व्यवहारिकता है। इसलिए मानवता के समक्ष जो भी समस्याएँ उपस्थित है उन सभी का समाधान करना ही इस संकल्पना का लक्ष्य है।

मुख्य शब्द : मानवाधिकार, चुनौतियाँ, समाधान।

दयाचन्द
व्याख्याता,
राजनीति विज्ञान विभाग,
राजकीय महाविद्यालय,
थानागाजी,
अलवर,राजस्थान

प्रस्तावना

मानवाधिकार की अवधारणा मानवता के दर्शन पर आधारित है। वास्तव में मानवाधिकार का मूल स्त्रोत मानव प्रकृति है। मानवाधिकार दर्शन में व्यक्ति ही केन्द्र में है। सैद्धान्तिक रूप से मानवाधिकार की अवधारणा का विकास परम्परागत उदारवादी चिन्तन से जुड़ा हुआ है। 20वीं शताब्दी के मध्य तक व्यक्ति के अधिकारों की उदारवादी परम्परा के दो स्वरूप मिलते है :– प्रथम वर्ग के सिद्धान्तकार अधिकारों की श्रेणी में केवल जीवन, सम्पत्ति तथा स्वतंत्रता के अधिकारों को रखते है और द्वितीय वर्ग के सिद्धान्तकार राज्य के कल्याणकारी स्वरूप पर बल देते हुए नागरिक के कुछ आर्थिक और सामाजिक अधिकारों को भी स्वीकार करते है। जैसे–कार्य करने का अधिकार, विश्राम करने का अधिकार, न्यूनतम मजदूरी पाने का अधिकार आदि। सामाजिक, राजनैतिक और वैचारिक विकास के साथ–साथ व्यक्ति और नागरिक अधिकार के मध्य स्थापित भेद धुंधला होता चला गया। संविधान द्वारा स्वीकृत अधिकार को नागरिक अधिकार तथा अन्तर्राष्ट्रीय विधि द्वारा मान्य अधिकार को मानवाधिकार की संज्ञा दी जाती है। विश्व के सभी देशों ने एक व्यवस्था के अनुसार ही कानूनी रूप में मानवाधिकारों को स्वीकारा और उन्हें सहेजा है।

अध्ययन का उद्देश्य

प्रस्तुत शोध–पत्र मानवाधिकार की संकल्पना और दृष्टिकोणों को उसके उद्भव–काल से समझने व जानने का एक प्रयास मात्र है। इस शोध–पत्र में मानवाधिकारों के प्रारम्भ से लेकर वर्तमान काल तक के दार्शनिक आधारों का विवेचन करके वर्तमान सदी के लिए एक दृष्टिकोण प्रस्तुत करना है। इससे मानवाधिकारों के इतिहास का विवेचन हमें यह बतलायेंगा, कि समाज में मनुष्यों को सम्मानित व आदर्श जीवन हेतु किस प्रकार मानवाधिकारों की जरूरत पड़ती है।

इस शोध–पत्र में बुद्धिजीवियों, साहित्यकारों, राजनेताओं, मनोवैज्ञानिकों एवं वैज्ञानिकों के सार्थक चिन्तन, मनन एवं गंभीर विचारों को रखा गया है। जिसमें विश्व की गंभीर समस्या मानवाधिकारों के हनन एवं संरक्षण की दशा, दिशा एवं इसका भावी समाधान कैसे हो ? इस पर प्रकाश डालने का प्रयास किया गया है। मानवाधिकारों के प्रति जनता ज्यादा जागरूक हो एवं प्रशासन अपनी पूरी जिम्मेदारी निभाएं। यही इस शोध–पत्र का उद्देश्य है।

साहित्यावलोकन

मानवाधिकारों के सन्दर्भ में किये गये इस शोध के महत्व, आवश्यकता, उद्देश्यों तथा शोध पद्वति का विवरण प्रस्तुत करते हुए, इस विषय पर लिखे गये साहित्य का अवलोकन विश्लेषण व मूल्यांकन किया गया है यथा –

सुरेन्द्र कटारिया ने अपनी पुस्तक "मानवाधिकार, सभ्य समाज एवं पुलिस" (2003) में मानवाधिकारों के सन्दर्भ में पुलिस की कार्यशैली को अपने

अध्ययन का विषय बनाते हुए, समाज की स्थिति की विस्तृत व्याख्या की है तथा यह बताने का प्रयास किया है कि कैसे पुलिस मानवाधिकारों का उल्लंघन करती है और सभ्य समाज में रहने का दावा करने वाले लोग आसानी से अपने अधिकारों का हनन सहन करते है।

एम.ए.अंसारी द्वारा लिखित कृति "महिला एवं मानवाधिकार" (2003) में महिला अधिकारों के हनन के कारणों पर प्रकाश डालते हुयें उनके समाधान की दिशा में किये जा रहे प्रयासों की विस्तृत विवेचना की है।

ललित चतुर्वेदी ने अपनी रचना "मानवाधिकार एवं कर्तव्य" (2001) में व्यक्ति के मानवाधिकारों के साथ–साथ व्यक्ति के कर्तव्यों पर भी अध्ययन प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। तथा यह बताने का प्रयास किया है कि लोग अपने कर्तव्यों की अपेक्षा अपने अधिकारों के प्रति ज्यादा सजग है जबकि उन्हें कर्तव्यों के प्रति भी सजग रहना चाहिए।

प्रदीप त्रिपाठी के द्वारा लिखित कृति "मानवाधिकार तथा भारतीय संविधान संरक्षण एवं विश्लेषण" (2002) में भारतीय संविधान में मानवाधिकारों के सन्दर्भ में किये गये उपबंधों पर प्रकाश जलते हुए, उनका विश्लेषण किया है साथ ही यह बताया है कि भारतीय संविधान मानवाधिकारों को पूरा संरक्षण प्रदान करता है।

डॉ.डी.एस. कपूर ने अपनी रचना 'मानवाधिकार एवं अन्तर्राष्ट्रीय विधि'(2017) में मानवाधिकारों के संदर्भ में अन्तर्राष्ट्रीय कानूनों का अध्ययन किया हैं तथा बताया हैं, कि भारत भी मानवाधिकारों के संदर्भ में अन्तर्राष्ट्रीय मानकों की पालना कर रहा हैं।

उपर्युक्त साहित्यावलोकन द्वारा शोध विषय से संबंधित साहित्य की समीक्षा करने का प्रयास किया गया है। समय तथा अन्य परिस्थितियों की सीमाओं में रहते हुए, जो साहित्य सुलभ हो पाये, उन्हीं की समीक्षा यहां की गई है।

शोध सीमा

शोधकार्य करते समय शोधार्थी के लिए यह अत्यन्त आवश्यक हो जाता है कि वह अपने कार्य की सीमाओं का ज्ञान रखें तथा उन्हें इस प्रकार से समायोजित एवं सीमित रखे कि उसका शोधकार्य नियत एवं सम्यक समय पर पूर्णता प्राप्त कर सके।

प्रस्तुत शोध पत्र में शोध सीमा का ध्यान रखते हुए मानवाधिकारों का विश्व के सन्दर्भ की अपेक्षा केवल भारत के सन्दर्भ में अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। भारत में मानवाधिकारों के सन्दर्भ में महिला, मजदूरों, बच्चों, आर्थिक एवं सामाजिक रूप से पिछड़े लोगों के मानवाधिकार हनन के कारणों एवं समाधानों को अध्ययन का विषय बनाया गया है।

शोध विधि

किसी भी शोधकार्य के लिए उपयुक्त शोध विधि का चयन करना अत्यन्त आवश्यक होता है, उपयुक्त शोध–विधि का चयन करके ही शोधार्थी अपने शोध के वांछित परिणाम प्राप्त कर सकता है। प्रस्तुत शोधपत्र के लिए सामग्री एकत्रित करने के लिए प्राथमिक एवं द्वितीयक स्त्रोंतों का उपयोग किया गया है साथ ही अवलोकन, साक्षात्कार, प्रश्नावली एवं अनुसूची प्रणाली का प्रयोग किया गया है।

मानवाधिकार

वर्तमान विश्व व्यवस्था में जबकि मानव, विकास के शीर्ष पर प्रतिष्ठित है, मानवाधिकार विश्व की मूल समस्या के रूप में विद्यमान है। वास्तव में मानवाधिकारों की अवधारणा व्यक्ति के प्रजातांत्रिक अधिकारों की धारणा से घनिष्ठ रूप से सम्बंधित है। अधिकारों व प्रजातंत्र का वर्तमान स्वरूप एक लम्बे विकास व दीर्घ मानवीय संघर्ष का परिणाम है। यह भी उल्लेखनीय है कि अधिकारों की धारणा व्यक्तियों के आपसी सम्बंधों तथा व्यक्ति व राजनीतिक सत्ता (राज्य) के आपसी सम्बंधों को परिभाषित करती है। प्राचीन भारतीय विचारकों ने धर्म के आधार पर व्यक्ति तथा व्यक्ति राज्य संबंधों का विश्लेषण किया है। यहाँ धर्म का अर्थ पूजा–पाठ की विशेष पद्धति से नहीं वरन् कर्तव्य व नैतिकता से है।

प्रत्येक प्रकार के अधिकारों विशेषकर मानव अधिकारों की आधारशिला इस धारणा पर आधारित है कि मानव गरिमायुक्त एवं विवेकशील प्राणी है तथा समाज की राज्य सहित सभी संस्थाओं का मूल उद्देश्य व्यक्ति का हित अथवा मानव कल्याण है। वस्तुतः दावों के रूप में अधिकारों की धारणा की दार्शनिक आधारशिला सर्वप्रथम पुनर्जागरण की प्रगति द्वारा रखी गयी थी।

अधिकारों की धारणा को दृढ़ता प्रदान करने तथा व्यक्तियों के कतिपय अधिकारों को जन्मजात अधिकारों के रूप में सर्वमान्य बनाने में अमेरिका व फ्रांस की क्रांतियों का महत्वपूर्ण योगदान है। अमरीकी क्रांति (1776) की घोषणा में कहा गया है कि हम इस सत्य को स्वयं सिद्ध मानते है कि मनुष्यों को समान बनाया गया है। "अर्थात् समानता का अधिकार एक स्वयं सिद्ध अधिकार है। इसी प्रकार फ्रांसीसी क्रांति (1789) ने स्वतंत्रता, समानता व बंधुत्व के तीन नारों का उद्घोष किया, जो वर्तमान मानवीय अधिकारों के आधार बन गये है। फ्रांसीसी क्रांति के उपरान्त जारी अधिकारों के घोषणा–पत्र (1948) में कहा गया कि "व्यक्ति" अपने अधिकारों के सम्बन्ध में स्वतंत्र व समान पैदा हुए है। अर्थात स्वतंत्रता व समानता के अधिकारों को व्यक्ति का जन्मजात अधिकार माना गया, अधिकारों की इस उदीयमान धारणा ने उदारवादी प्रजातंत्र के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है लेकिन उदारवादी अधिकारों की उक्त धारना केवल राजनीतिक व नागरिक अधिकारों तक सीमित थी। उसमें सामाजिक व आर्थिक अधिकारों को महत्व नहीं दिया गया था।

भारत में मानवाधिकार हननः एक समस्या

मानवाधिकार से संबंधित समस्याएँ वर्तमान में अत्यन्त जटिल व चितांजनक है ये समस्याएँ राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय दोनों स्तरों पर विद्यमान है। इन समस्यों में से भारत में तीन प्रमुख एवं ज्वलन्त समस्याएं है।

यथा – 1. महिलाओं की समस्या, 2. बाल श्रमिकों की समस्या, 3. भूखमरी एवं गरीबी की समस्या।

मानवाधिकार की समस्या के रूप में जब हम महिलाओं की समस्याओं पर बहस करते है तो आश्चर्यजनक अनुभूति होती है। क्योंकि मानवाधिकार के

सर्वाधिक हनन के मामले महिलाओं सें सम्बन्धित हैं। उनके साथ अमानवीय व्यवहार हो रहा है। भ्रूण हत्या, दहेज हत्या, बलात्कार, घरेलू हिंसा की महिलाएं हर रोज षिकार हो रही हैं। संगठित पुलिस भी उनकी रक्षा करने की बजाय उन पर जुल्म ढ़हा रहीं हैं। कामकाजी महिलाओं के साथ कार्यस्थल पर अमानवीय व्यवहार होता हैं। उन्हें अमानवीयता का सामना करना पड़ता हैं तथा उनका शारीरिक व मानसिक शोषण होता हैं। यद्यपि महिलाओं की सुरक्षा हेतु राष्ट्रीय महिला आयोग बनाया गया हैं। किन्तु आयोग के पास पर्याप्त शक्तियों का अभाव हैं।

यद्यपि षिक्षा एवं जागरूकता का स्तर बढ़ने से महिलाओं की स्थिति में कुछ सुधार आया हैं। किन्तु अभी भी महिलाओं को पुरूषों के बराबर लाने के लिए ओर प्रयास करने की महत्ती आवश्यकता हैं। मानवाधिकार के उल्लंघन का दूसरा भयावह रूप बाल श्रम की समस्या के रूप में दिखाई देता हैं। बाल श्रम की समस्या एक प्राचीन एवं विश्वव्यापी सामाजिक–आर्थिक समस्या हैं। भारत के कृषि समाज में बालक कृषि एवं पारम्परिक व्यवसाय में सहायता करते थें। और इस तरह के हुनर सीखते थे। परन्तु औद्योगिकीकरण के धमाके ने बाल श्रम का स्वरूप बदल दिया हैं। 19वीं शताब्दी के मध्य में बाल–श्रम ने एक समस्या के रूप में जन्म लिया। बाल श्रमिकों की यह समस्या भारत में विषेष रूप से दिखाई देती है। बाल श्रमिकों के कारण मानवाधिकारों के उल्लंघन का हौवा खड़ाकर पश्चिमी देश भारत विरोधी गोलियां दागते हैं। लेकिन कम उम्र में मजदूरी की सामाजिक आर्थिक मजबूरियों को दूर करने में सम्पन्न समाज कभी कोई दिलचस्पी नहीं दिखाता। ये बच्चे मजदूरी नहीं करेंगे तो उनका एवं उनके परिवार जनों का जीवन ही असम्भव हो जायेगा। अभी हाल में ही अन्तर्राष्ट्रीय श्रम आयोग ही एक रिपोर्ट के मुताबिक सारे विश्व में बाल श्रमिकों की संख्या लगभग 25 करोड़ है और भारत में भी लगभग 5 बच्चों में से एक बच्चा बाल श्रमिक हैं। देश के 53 प्रतिशत बच्चे को दो वक्त का पौष्टिक भोजन तक नहीं मिल पा रहा है। बालश्रम की इस भयावह समस्या के लिए जो प्रमुख कारण उत्तरदायी हैं। उनमें निर्धनता, जनसंख्या वृद्धि, बेरोजगारी एवं अशिक्षा आदि हैं।

निर्धनता वह दशा है जिसमें व्यक्ति के स्वयं एवं उसके ऊपर आश्रित लोगों के स्वस्थ जीवन के लिए आवष्यक आवश्यकताओं की पूर्ति न हो पाना हैं। बाल श्रम के लिए मूलतः निर्धनता जिम्मेदार हैं जब तक परिवार के लिए वैकल्पिक व्यवस्था नहीं हो पाती तब तक बाल श्रम की समस्या से निजात पाना मुश्किल हैं।

बाल श्रम की समस्या के लिए बेरोजगारी भी उत्तरदायी है, जब गरीब परिवारों को रोजगार नहीं मिलेगा तो उनके जीवन निर्वाह का संकट पैदा होगा ही। ऐसे में बाल श्रम जैसी समस्या को पनपने का अवसर मिल जाता हैं। उपरोक्त कारणों के अतिरिक्त और भी अनेकानेक कारण हैं जो बाल श्रम की समस्या को उत्पन्न करते हैं।

मानवाधिकार की एक ज्वलंत समस्या, भुखमरी की समस्या हैं। संयुक्त राष्ट्र संघ की एक ताजा रिपोर्ट के अनुसार विश्व में 80–90 करोड़ लोग भुखमरी के कारण जीवन जीने के अधिकार से वंछित हैं। भुखमरी की सबसे भयावह दशा सोमालिया एवं इथोपिया में देखने को मिलती हैं, एक आंकड़े के मुताबिक अकेले भारत में लगभग 32 करोड़ नागरिक गरीबी रेखा के नीचे हैं, इसमें 5 करोड़ तो बुरी तरह नंगी हालत में हैं। जिनकी जीने की इच्छा होते हुए भी काल के ग्रास में समाहित होते जा रहे हैं, जबकि हकीकत यह हैं कि शारीरिक रूप से उत्तम स्वास्थ्य ही किसी देश की खुशहाली एवं समृद्धता का द्योतक होता हैं।

भारत जैसे बहुभाषी और बहुधार्मिक देश में मानवाधिकारों के प्रवर्तन में अनेक व्यवहारिक उलझने सामनें आती रहती हैं। गरीबी, निरक्षरता, भुखमरी, पलायन, जातिवाद, विषमता, आतंकवाद, कुपोषण कुछ ऐसी ही उलझनें हैं। कई बार जातिवादी हिंसा का वीभत्स रूप भी अचानक मानवाधिकारों के सामने अवरोध बनकर खड़ा हो जाता हैं।

समाधान/सुझाव

वर्ष 1948 में 10 दिसम्बर को संयुक्त राष्ट्र महासभा ने मानवाधिकारों की विश्वव्यापी घोषणा कीं। इस घोषणा के अनुसार संयुक्त राष्ट्रसंघ को विश्व स्तर पर सभी मनुष्यों के बीच समानता, भाईचारा तथा सौहार्द्ध स्थापित करने के लिए अधिकृत किया गया हैं। संयुक्त राष्ट्रसंघ मानवाधिकार घोषणा–पत्र पर भारत ने सन् 1948 में ही हस्ताक्षर कर दिये थे। मानवोचित अधिकारों के संरक्षण के प्रति भारत की तत्कालीन सरकार ही नहीं, संविधान निर्माता भी सजग थे। भारतीय संविधान के विभिन्न अनुच्छेद न केवल मानवाधिकारों की रक्षा ही करते हैं, बल्कि उनका सम्मान भी करते हैं।

सन् 1993 में राष्ट्रपति द्वारा जारी किये गये एक अध्यादेश के अन्तर्गत राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग का गठन किया गया। इस अध्यादेश के बाद मानवाधिकार संरक्षण अधिनियम, 1994 पारित किया गया। इस अधिनियम द्वारा राज्यों में मानवाधिकार आयोगों तथा जिलों में मानवाधिकार न्यायालयों की स्थापना का प्रावधान किया गया हैं। देश में मानवाधिकारों के संवर्द्धन तथा संरक्षण के लिए गैर–सरकारी संगठन भी सराहनीय कार्य कर रहें हैं।

भारत सरकार द्वारा पिछले कुछ वर्षों में इस दिशा में कुछ ठोस कदम उठाये गये हैं। मनरेगा, शिक्षा का अधिकार अधिनियम, खाद्य सुरक्षा कानून, कार्यस्थलों पर यौन उत्पीड़न रोकने हेतु अधिनियम, रैगिंग के विरूद्ध अधिनियम, बाल श्रमिक पुनर्वास कोष की स्थापना इत्यादि सरकारी कदमों का इस दिशा में ठोस उपाय की संज्ञा दी जा सकती हैं। किन्तु इसके अतिरिक्त अभी भी अनेक कार्य इस दिशा में किये जाने हैं। जिसके लिए निम्नलिखित सुझाव दिये जा सकते हैं यथा–

1. जनसाधारण को मानवाधिकारों के प्रति जागरूक बनाना चाहिए। इस हेतु मानवाधिकार विषय को स्कूली स्तर के पाठ्यक्रम में शामिल किया जाना चाहिए तथा अशिक्षित जनता हेतु निःशुल्क विधिक साक्षरता कार्यफ्रक्रम चलाये जाने चाहिए।

2. मानवाधिकार के प्रति जागरूकता के लिए संचार साधनों का इस्तेमाल किया जाना चाहिए।
3. स्वैच्छिक संगठनों को मानवाधिकारों के प्रति जागरूक किया जायें।
4. सरकारी संस्थानों, कार्यालयों को मानवाधिकारों के प्रति समय–समय पर सतर्क करने हेतु परिपत्र जारी किये जाये।
5. मनवाधिकारों के लिए कार्यरत संस्थानों, स्वैच्छिक संगठनों का चिन्हीकरण किया जाए तथा उन्हें विशेष प्रोत्साहन दिया जाए।
6. मनवाधिकारों को समाज में जन आंदोलन के रूप में प्रसारित किया जाए।
7. सरकार को बेरोजगारी, गरीबी, भुखमरी जैसी समस्याओं के निदान के लिए गंभीरता से प्रयास करने चाहिए। ताकि मानवाधिकारों के हनन में कमीं आयें।

निष्कर्ष

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि मानवाधिकार एवं विकास एक दूसरे के पूरक हैं। जिस राष्ट्र में मानवाधिकार सुरक्षित होंगे, संवर्धित होंगे उस राष्ट्र का सर्वांगिण विकास होगा। मानवाधिकारों का हनन, संघर्ष एवं अषांति को जन्म देता हैं। जिससे राष्ट्र का विकास तथा सुरक्षा प्रभावित होती है। उभरती वैश्विक विश्व व्यवस्था में मानवाधिकारों के संरक्षण की नितान्त आवश्यकता हैं, क्योंकि भारत जैसे विकासशील राष्ट्र में जहां लगभग 40 करोड़ नागरिक गरीबी रेखा के नीचे जीवन व्यतीत कर रहें हैं। राष्ट्र बेरोजगारी, भुखमरी, गरीबी, आतंकवाद, सम्प्रदायवाद तथा पर्यावरणीय चुनौतियों से जुझ रहा हैं। ऐसी स्थिति में 21 वी शताब्दीं में भारत को विकसित एवं शक्तिशाली राष्ट्र बनाने का सपना तभी साकार होगा, जब भारत आम नागरिकों के मानवाधिकारों के संरक्षण की उचित व्यवस्था करेगा।

यद्यपि राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग मानवाधिकारों के संरक्षण हेतु सराहनीय कार्य कर रहा हैं। क्योंकि भारतीय लोकतंत्र मानवाधिकारों के संरक्षण के लिए सचेष्ट हैं। अतः मानवीय मूल्यों को अक्षुण्ण बनाये रखने हेतु मानवाधिकारों का संरक्षण अपेक्षित हैं और 'वसुधैव कुटुम्बकम्' एवं 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' जैसी मानवतावादी विचारधारा वाली भारतीय लोकतांत्रिक व्यवस्था इस हेतु कृत संकल्प हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *भारती, दलबीर, पुलिस और लोग–दोनों के अधिकार और जिम्मेदारियां, ए.पी.एच. पब्लिशिंग कॉर्पोरेशन, नई दिल्ली, 2007, पृष्ठ 19.*
2. *चतुर्वेदी, ललित, मानवाधिकार और कर्तव्य, रितु पब्लिकेशंस, जयपुर, 2001, पृष्ठ 11.*
3. *अंसारी, एम.ए., महिला एवं मानवाधिकार, ज्योति प्रकाशन, जयपुर, 2003, पृष्ठ 367–368.*
4. *कटारिया, सुरेन्द्र, मानवाधिकार, सभ्य समाज एवं पुलिस, आर.वी.एस. पब्लिकेशन, जयपुर, 2003, पृष्ठ 58.*
5. *सिंह, राजबाला, मानवाधिकार एवं महिलाएं, आविष्कार पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स, जयपुर, 2006, पृष्ठ 35.*
6. *सुब्रह्मण्यम, एस., पुलिस एवं मानवाधिकार, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, 2007, पृष्ठ 69.*
7. *तारकुड़े, वी.एम., मानवाधिकारों का दर्शन, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 1995, पृष्ठ 41.*
8. *रिसर्च जर्नल ऑफ सोशल एण्ड लाइफ साइन्स, वोल्यूम 04, वर्ष 02, जनवरी–जून 2008, पृष्ठ–411.*
9. *त्रिपाठी, प्रदीप, मानवाधिकार तथा भारतीय संविधान संरक्षण एवं विश्लेषण, राधा पब्लिकेशंस, दिल्ली, 2002 पृष्ठ–43.*
10. *शर्मा, वाई.एस., तायल, विमलेन्दू, मानवाधिकार– अन्तर्राष्ट्रीय संगठन एवं कानून, यूनिवर्सिटी बुक हाऊस प्रा.लि. जयपुर, 2008, पृष्ठ–17.*
11. *कपूर, डी.एस., मानवाधिकार एवं अन्तर्राष्ट्रीय विधि, सेन्ट्रल लॉ एजेंसी, 2017, पृष्ठ 34–37.*